Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
July- December 2022 3(2), 1096–1100

योग दर्शन के अंतर्गत साधकों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

कृष्णा सूर्यवंशी [1], मिर्ज़ा फहीम बेग [2], निखिल शर्मा[3]

[1]असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, श्री अग्रसेन महाविद्यालय, मउरानीपुर, झांसी, उत्तर प्रदेश
[2]शोधार्थी योग विज्ञान विभाग लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संस्थान, ग्वालियर, मध्यप्रदेश
[3]शोधार्थी योग विज्ञान विभाग लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संस्थान, ग्वालियर, मध्यप्रदेश

DOI
10.29121/shodhkosh.v3.i2.2022.4225

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2022 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

ABSTRACT

साध्य, साधन एवं साधक उपदानों की समग्रता साधना है, जिसका परम ध्येय परमात्म शरणागती है। साधना से साधक का रूपांतरण मानव से महामानव एवं जीवात्मा से परमात्मा के स्वरूप में होता है। इस अवस्था के लिए विभन्न ग्रंथों मे मोक्ष, कैवल्य, निर्वाण, व समाधि जैसे आदि नामों का उल्लेख मिलता है। इस स्थिति की प्राप्ति हेतू विभ्न्नि संप्रदायों द्वारा अलग–अलग मतों व मार्गों का प्रतिपादन किया है। इन सोपानों को पालन करते हुए अग्रसर होने वाले व्यक्ति को साधक के रूप मे संबोधित किया जाता है वस्तुतः सभी साधकों के लक्ष्यों मे समानता होते हुए भी विभन्न संप्रदायों व धराओं की क्रियाविधि के आधार पर इनमे विभेद मिलता है। विभिन्न उपासकों मे जैसे कुटिचक, बहूदक, हंस, परमहंस, आर्त, अर्थार्थी, जिज्ञासु व ज्ञानी आदि विभिन्न श्रेणियों मे मृदु, म के माध्यम ध्य, अधिमात्र व अधिमात्रत्व साधक एवं विभिन्न धाराओं मे मंत्र, लय, हठ, राज, ज्ञान, भक्ति व कर्मयोग आदि साधकों की श्रेणियों का उल्लेख मिलता है। इनमे भी वे साधक जिन्होने साधना की परम अवस्था अध्यात्मपद को प्राप्त कर लिया है उन्हें आध्यात्मिक ग्रंथों मे दिगम्बर, तुरीयातीत, अवधुत, अधिमात्रतम, ज्ञानी, स्थितप्रज्ञ व जीवनमुक्त आदि नामो से निर्दिष्ट किया गया है। योग दर्शन मे इस स्थिति की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील योगाभ्यासीयों को विभिन्न व्रतों जैसे अष्टांगयोग, क्रियायोग, अभ्यास– वैराग्य व ईश्वरप्रणिधान आदि के निर्देश दिए गए है। इन व्रतों के पालन में स्थायित्वता, चिरकालिनता, अविच्छिन्नता, समर्पण व प्रेम जैसे गुणों की वांछनीयता की अनिवार्यता को महत्वपूर्ण माना है। समाज मे सामान्य तौर पर इन्हे साधु, संत, सन्यासी, भक्त, भिक्षु, योगी व तपस्वी आदि संज्ञाओं से संबोधित करते है साधकगण प्रायः आत्मोन्नति के साथ लोक कल्याण को भी प्रेषित करते है।

OPEN ACCESS

1. परिचय

व्यक्ति का जीवन विभिन्न कर्मों का समूह है कर्म ही मानव जीवन का आधार बनते है। इन कर्मों से कर्मसंसकारों का निर्माण होता है। त्रिक्रियात्मक प्रकृति के अंतर्गत होने से यह सभी सात्विक, राजसिक व तामसिक गुणों से लिप्त होते है।[1] परिणामस्वरूप लौकिक जगत के समस्त कर्म एवं इनके परिणाम पाप–पुण्य व सुख–दुःख से युक्त होते है। सुखद प्रतित होने वाले कर्मसंसकार भी अंततः दुःखस्वरूप ही होते है क्योंकि इह लोक के सभी सुख क्षणभंगुर होते है।[2] जिसके कारण मानव ने उस तत्व की खोज प्रारंभ की जिससे चिरकाल तक आनन्द स्थिति मे रहा जा सके इसके लिए मानव ने ध्यान, तपस्या, भक्ति, योग व ज्ञान आदि को निमित्त बनाया इन यत्नों व प्रयोजनों से विभिन्न दर्शनों, ज्ञान एवं वैचारिक परंपराओं का प्रादुर्भाव हुआ। उक्त परम आनंद की अवस्था के लिए विभन्न ग्रंथों मे मोक्ष, कैवल्य, निर्वाण, व समाधि जैसे आदि नामों का उल्लेख मिलता है।[3] पतंजली योग सुत्र मे इसे योगाभ्यासी के द्वारा अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानने की अवस्था के रूप मे वर्णित किया गया है।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।। (1.2)
तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्।। (1.3)
पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तेरिति।। (4.34)

जब साधक अपने चित्त की समस्त वृत्तियों को क्षीण कर समाप्त कर देता है एवं दृष्टा (आत्मतत्व) अपने स्वरूप मे स्थित हो जाता है यह अवस्था कैवल्य कहलाती है। साधक का सात्विक, राजसिक व तामसिक गुणों के साथ अविद्याकृत संयोग समाप्त हो जाना इससे अभ्यासी का त्रिविध प्रकृति से पृथक हो जाना एवं कर्मों व कर्मसंस्कार का भी अपने कारण में विलीन हो जाना ही मुक्ति की अवस्था है। इस स्थिति के लिए निर्बिज समाधि शब्दावली का प्रयोग किया गया है।[4]

ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा।। (1.48)
तस्यापि निरोधे सर्वनिरोधान्निर्बीजः समाधिः।। (1.51)
सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यम्।। (3.55)

योग साधक जब सबीज समाधि का अभ्यास करता है और अभ्यास से जब योगी के चित्त की अवस्था परिपक्व हो जाती है समाधि की इस अवस्था में किसी प्रकार का कोई भी विकार शेष नहीं बचता है बुद्धि स्वच्छ–निर्मल हो जाती है इसे ऋतम्भरा प्रज्ञा (सत्य बुद्धि) के रूप मे परिभाषित किया जाता है। ऋतम्भरा प्रज्ञा द्वारा अन्य सभी संसकारों का अभाव कर देने के उपरांत इससे उत्पन्न संसकारों मे भी अनासक्ति भाव से निरोध हो जाना ही निर्बीज समाधि, असम्प्रज्ञातयोग व कैवल्यपद है।[5] इस अवस्था मे प्रवेश करते ही समस्त संसकारों का नाश एवं उनके बीजों का सर्वथा अभाव हो जाता है व साधक कैवल्य पद को प्राप्त करता है।

निर्बीज समाधि एवं कैवल्य पद की प्राप्ति इसकी निर्भता योगाभ्यासियों द्वारा किये जाने वाले विभिन्न प्रयोजनों व साधनों जैसे अभ्यास, वैराग्य, भवप्रत्यय, उपायप्रत्यय, ईश्वरप्रणिधान, क्रियायोग, अष्टांगयोग, चित्तप्रसादन आदि की प्रवृत्ति व गती से निर्धारित होती है। जिससे योग साधकों की स्थिति व प्रवृत्ति के आधार पर विभेद दिखलाई देते हैं।

तीव्रसंवेगानामासंन्नः।। (1.21)

जिन योगियों का साधन तीव्र संवेग से चलता है, जो साधक योगमार्ग मे आने वाले विघ्नों व क्लेशों को तेजी से हटाते हुए साधना मे तत्परता से लगे रहते हैं, उन अभ्यासियों का योग शीघ्र सिद्ध हो जाता है।[6] मंद गती से की जाने वाली साधना मे प्राप्ति देरी से होती है।

योगदर्शन में वर्णित विभिन्न साधकों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

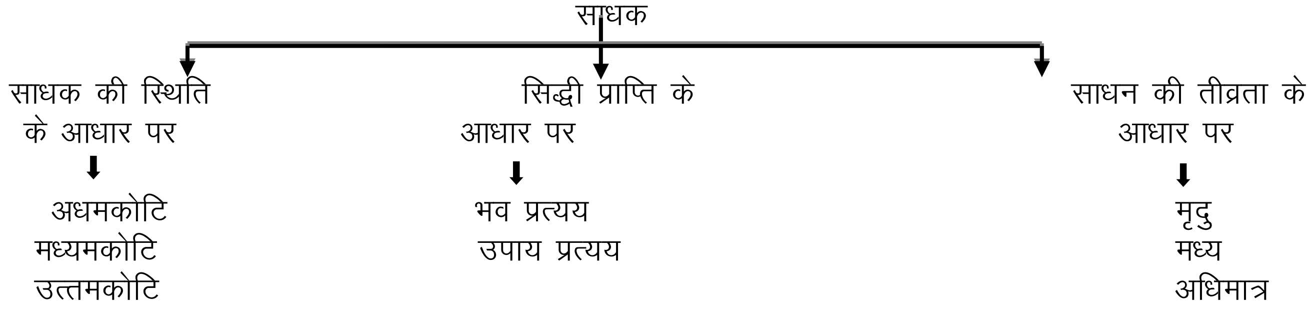

साधक की स्थिति के आधार पर

अधम कोटि के साधक : यह सबसे प्रारंभिक अवस्था व निम्न श्रेणी के अभ्यासी होते है इनके अभ्यास के लिए महर्षि पतंजली द्वारा अष्टांगयोग का निरूपण किया गया है।[7]

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि।। (2.29)

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारना, ध्यान और समाधि ये आठ अंग योग के है। अष्टांगयोग की अवधारणा का निर्माण इन आठों अंगों के संयुक्त होने से होता हैं, इस अभ्यास से विवेकज्ञान की प्राप्ति साधक को होती है।

योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः।। (2.28)

योगी द्वारा उक्त आठ अंग युक्त योग को अभ्यास करने से चित्त मे स्थित समस्त विकारों व अशुद्धियों का नाश होकर वह सर्वथा निर्मल हो जाता है। उस अवस्था मे योगी के ज्ञान का प्रकाश विवकेख्याति तक हो जाता है, जिससे योगी के समक्ष सत्य–असत्य के सभी भेद भलीभाती खुल जाते है।[8]

मध्यम कोटि साधक : वे अभ्यासी जिनके पूर्ववत कर्मसंसकार योगमय रहे हो और वे आगे पुनः अध्यात्म यात्रा प्रारंभ करना चाहते है, ऐसे अभ्यासीयों को मध्यम श्रेणी के अंतर्गत शामिल किया जाता है। इनके लिए योग दर्शन मे क्रियायोग का मार्ग प्रशस्त किया गया है।[9]

तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः।। (2.1)

तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान के अभ्यास को क्रियायोग के रूप मे परिभाषित किया है। इसके अभ्यास से क्लेशों को न्युन करने की शक्ति प्राप्त होती है।

समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च।। (2.2)

क्रियायोग के अभ्यास से योगी के अविद्या आदि क्लेंशों का क्षय हो जाता है, और कैवल्य अवस्था तक की समाधि भावना प्राप्त होती है।[10]

उत्तम कोटि साधक : वह अभ्यासी जिनके अंतःकरण स्वभाव से ही शुद्ध है उन्हे उच्चतम अवस्था के साधक बताया गया है इनके लिए ईश्वर–प्रणिधान के अभ्यास का वर्णन महर्षि पतंजली द्वारा प्रतिपादित किया गया है।[11]

ईश्वरप्रणिधानाद्वा।। (1.23)
तस्य वाचकः प्रणवः।।(1.27)
तज्जपस्तदर्थभावनम्।।(1.28)

ईश्वर शरणागती व ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव होना। उस परम चेतना को ओंकार नाम से जानना चाहिए और साधक को ईश्वर के नाम व अर्थस्वरुप का चिन्तन–मनन करना चाहिए। इससे साधना मे विघ्नों का अभाव व परम चेतना का ज्ञान साधक को होता है।[12]

सिद्धी प्राप्ति के आधार पर

असम्प्रज्ञात समाधि प्राप्ति के आधार पर दो वर्गो भवप्रत्यय व उपायप्रत्यय के रूप में वर्गीकृत किया है योगबीज ग्रंथ में इन्हें ही क्रमशः काकमत एवं मर्कटमत के रूप में वर्णीत किया गया है[13]

भवप्रत्यय (काकमत) : यह साधक अपने पूर्वजन्मों के कर्मो के अनुसार योगमार्ग में अल्पसाधना व अल्पावधि में सिद्धि प्राप्त कर लेते है।

भवप्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम्।। (1.19)

पूर्वजन्म मे जो योग साधक साधना करते हुए विदेह अवस्था एवं प्रकृतिलय तक की स्थिति प्राप्त कर चुके थे, किंतु कैवल्यपद की प्राप्ति होने के पूर्व ही जिनकी मृत्यु हो जाती है, ये योगमार्ग मे पथभ्रष्ट साधक पुनः योगिकुल मे जन्म लेकर तत्काल अपनी वास्तविक स्थिति को जान शीघ्र निर्बीज समाधि अवस्था को प्राप्त कर लेते है।[14]
उपायप्रत्यय (मर्कटमत): यह साधक एक मर्कट की भॉती एक–एक पायदान को पार कर अधिक श्रम व समय में सिद्ध को प्राप्त करते है।

श्रद्धसवीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम्।।(1.20)

भवप्रत्यय के अलावा अन्य साधकों की योगसिद्धि क्रमशः श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि और प्रज्ञा द्वारा पूर्ण होती है।[15]

साधन व साधना की तीव्रता के आधार पर

योगदर्शन में तीन प्रकार के साधक मृदु मध्य व अधिमात्र का वर्णन मिलता है वही एक अन्य योगी "अधिमात्रतम् साधक" का उल्लेख शिवसंहिता में मिलता है।[16] जिन्हे उक्त तीनों से उच्चतम अवस्था के साधक के रूप मे वर्णित किया गया है।

मृदुमध्याधिमात्रत्वात्ततोऽपि विशेषः।। (1.22)

साधक द्वारा अपनाये गये साधनों की मात्रा जैसे अभ्यास–वैराग्य व उपायप्रत्यय साधनों मे भिन्नता के फलस्वरुप योगसिद्धि के काल मे भेद देखने को मिलता है। साधन की मात्रा के आधार पर इन्हे हलके, मध्यम व उच्च श्रेणी मे विभेदित किया गया है।

साधक के अभ्यास व वैराग्य के तीव्रता होने पर भी विवेक व भाव की न्यूनता के कारण समाधि की प्राप्ति देरी से होती है यह साधन हलकीमात्रा वाला होता है। श्रद्धा, विवेक व भाव की कुछ अधिकता होने पर वह साधन मध्यममात्रा वाला हो जाता है और श्रद्धा, विवेक व भाव की अत्यन्त उन्नत स्थिति मे होने से यह साधन अधिमात्रा वाला हो जाता है।[17]

उपाय प्रत्यय साधको को पुनः नौ भागो मे वर्गीकृत किया गया है

मृदु उपाय मृदु संवेगवान	मध्य उपाय मृदु संवेगवान	तीव्र उपाय मृदु संवेगवान
मृदु उपाय मध्य संवेगवान	मध्य उपाय मध्य संवेगवान	तीव्र उपाय मध्य संवेगवान
मृदु उपाय तीव्र संवेगवान	मध्य उपाय तीव्र संवेगवान	तीव्र उपाय तीव्र संवेगवान

मृदु : जीन साधको मे कम उत्साह, अल्प ज्ञान, मोहयुक्त, रोगयुक्त, गुरू से निंदा, लोभी, पापी, चंचल, कायर, पत्नि पर निर्भरता, अधिक भोजन सेवन, निष्ठुरता व निर्बलता जैसे अपरिपक्व गुण पाये जाते है वह कोमल साधक कहलाता है। यह मंत्रयोग का अधिकारी होता है, और विशेष प्रयत्नों से बारह वर्षों में जाकर सिद्धि को प्राप्त होते है।[18]

मध्यम साधक : यह साधक समबुद्धि, क्षमाशील, पुण्यकारी मधुरभाषी व सामान्य सामर्थ गुणों वाले होते है। यह लययोग के अधिकारी होते है इन्हे नौ वर्षों के निरंतर यत्नों द्वारा योगावस्था की प्राप्ती होती है।[19]

अधिमात्र साधक : यह उपासक स्थिर बुद्धि, स्वाधीन, शक्तिशाली, लययोग के अभ्यासी, दयायुक्त, श्रेष्ठ विचारों वाले, क्षमाशील, सत्यभाषी, श्रद्धायुक्त, गुरूसेवक व योगाभ्यासी गुणों वाले होते है। यह हठयोग के अधिकारी होते है, निरंतर प्रयत्नों से इन्हें छः वर्षो में सिद्धि प्राप्त होती है।[20]

अधिमात्रतम् साधक : यह अभ्यासी अत्यधिक उत्साही, शक्तिवान, पराक्रमी, मिताहारी, दानी, कार्यकुशल, बुद्धिमान, दृढ़ विचार वाला, आश्रयदाता, प्रिय व मधुर भाषी, धार्मिक, देव व गुरू को पुजने वाला आदि परिपक्व गुणों से युक्त होता है, यह राजयोग का अधिकारी है और निरंतर अभ्यास से तीन वर्षों में सिद्धि प्राप्त कर लेते है।[21]

सारांश

आध्यात्मिक मार्ग मे आत्मोन्नती क्रिया में लगे व्यक्ति को साधक कहते है। इनमें यम व नियम के समस्त तत्वों का समावेषण होता है और यह प्रायः एकांतवासी, जीतेन्द्रिय, संयमी व आत्मजयी होते है। ऐसे पुरूष मन, वाणी व इन्द्रियों को संयमित, संतुलित, शांत व मौन रखने से मुनी कहलाते है। प्रेम, बल, बोध (स्मृति), स्थायित्व (समाधि) और प्रज्ञा (बुद्धि) इनकी साधना के पायदान है इन साधकों के हृदय में सदा संतोष, हर्ष, उत्साह, धैर्य, क्षमा व आनंद जैसे सात्विक गुणों का वास होता है। यह त्यागी आत्मा जीविका के साधनों में अच्छा–बुरा, पसंद–नापसंद, भले–बुरे पाप–पुण्य व सुख–दुख आदि द्विभावों से मुक्त रहकर इनमें समत्व भाव रखते है। विभेदीकरण के अनुसार इन्हें कई श्रेणियों में विभक्त किया गया है, जिसमें से अध्यात्म प्राप्त साधकों को ज्ञानी, अवधूत, तुरीयातीत, अधिमात्रतम व दिगम्बर आदि नामों से विभूषित किया है। यह साधक जीवात्मा का उत्थान कर क्रमषः उसे महात्मा, देवात्मा एवं परमात्मा में रूपांतरण हेतू अग्रसर होते है। यह जीवनमुक्त अवस्था को प्राप्त कर जगत कल्याण में अपनी भूमिका का निर्वहन करते है जिसमें प्राचीनकालीन साधकों में महर्षि वेदव्यास, महर्षि याज्ञवलक्य, मुनी कपील व महर्षि पतंजली आदि प्रमुख है,

मध्यकालीन साधकों में संत कबीरदास संत सुरदास, मीराबाई, तुलसीदास, गुरू गोरक्षनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ प्रमुख है और आधुनिक काल के साधकों में रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, महर्षि रमण व महर्षि अरविंद आदि महत्वपूर्ण है।

CONFLICT OF INTERESTS

None.

ACKNOWLEDGMENTS

None.

संदर्भ

श्रीमद् भगवत्गीता – गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, गीताप्रेस प्रकाशक। (पृष्ठ क्र. 219–220)

सिन्हा, प्रो. हरेन्द्र प्रसाद, (2018) भारतीय दर्शन की रूपरेखा ,मोतीलाल बनारसीदास। (पृष्ठ क्र. 121)

सिंह,डॉ.शिव भानु (2020) – धर्म–दर्शन का आलोचनात्मक अध्ययन–इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन। (पृष्ठ क्र. 190)

सरस्वती,स्वामी सत्यानन्द (2013) – मुक्ति के चार सोपान–मुंगेर बिहार, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट। (पृष्ठ क्र. 29,37,292)

सरस्वती,स्वामी सत्यानन्द (2013) – मुक्ति के चार सोपान–मुंगेर बिहार, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट।(पृष्ठ क्र.111,116,243)

सरस्वती,स्वामी सत्यानन्द (2013) – मुक्ति के चार सोपान–मुंगेर बिहार, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट।(पृष्ठ क्र. 69)

तीर्थ, श्रीस्वामी ओमानन्द (2017) – पातंजलयोगप्रदीप–गीताप्रेस, गोरखपुर। (पृष्ठ क्र. 317)

गोयन्दका, हरिकृष्णदास (2019) – पातंजलयोगदर्शन– गीताप्रेस, गोरखपुर। (पृष्ठ क्र. 62–63)

तीर्थ, श्रीस्वामी ओमानन्द (2017) – पातंजलयोगप्रदीप–गीताप्रेस, गोरखपुर।(पृष्ठ क्र. 317)

गोयन्दका, हरिकृष्णदास (2019) – पातंजलयोगदर्शन– गीताप्रेस, गोरखपुर। (पृष्ठ क्र. 43–44)

तीर्थ, श्रीस्वामी ओमानन्द (2017) – पातंजलयोगप्रदीप–गीताप्रेस, गोरखपुर। (पृष्ठ क्र. 99)

गोयन्दका, हरिकृष्णदास (2019) – पातंजलयोगदर्शन– गीताप्रेस, गोरखपुर। (पृष्ठ क्र. 25,27,28)

भारती स्वामी अनन्त (2019) – योगबीज – इंदु प्रकाशन (मंत्र. 165) (पृष्ठ क्र. 107)

इन्द्राणी,डॉ. (2018) – पातंजलयोग सूत्र के आधारभूत तत्व–उत्तम नगर नई दिल्ली, सत्यम पब्लिशिंग हाऊस। (पृष्ठ क्र. 43)

इन्द्राणी,डॉ. (2018) – पातंजलयोग सूत्र के आधारभूत तत्व–उत्तम नगर नई दिल्ली, सत्यम पब्लिशिंग हाऊस। (पृष्ठ क्र. 46)

महेशानन्दजी स्वामी (2004) शिवसंहिता , कैवल्यधाम श्रीमन्धव योग मन्दिर समिति लोनावला पुणे।(पृष्ठ क्र. 236)

स्वामी,विवेकानन्द (1961)–राजयोग (पातंजल–योगसूत्र, सूत्रार्थ और व्याख्या सहित)–चन्तोली, नागपुर श्रीरामकृष्ण आश्रम।(पृष्ठ क्र. 150)

महेशानन्दजी स्वामी (2004) शिवसंहिता , कैवल्यधाम श्रीमन्धव योग मन्दिर समिति लोनावला पुणे।(पृष्ठ क्र. 236–237)

महेशानन्दजी स्वामी (2004) शिवसंहिता , कैवल्यधाम श्रीमन्धव योग मन्दिर समिति लोनावला पुणे।(पृष्ठ क्र. 237)

महेशानन्दजी स्वामी (2004) शिवसंहिता , कैवल्यधाम श्रीमन्धव योग मन्दिर समिति लोनावला पुणे।(पृष्ठ क्र. 237–238)

महेशानन्दजी स्वामी (2004) शिवसंहिता , कैवल्यधाम श्रीमन्धव योग मन्दिर समिति लोनावला पुणे।(पृष्ठ क्र. 238–240)